किशोरा बालिका : एक समझ

❑ डॉ. प्रीतम पाल

वय: सन्धि मानव जीवन की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण परिघटना है । कैशोर्य ऐसी ही संक्रमण अवस्था है । इस अवस्था में होने वाले परिवर्तन आगत भविष्य पर अपनी गहरी छाप छोड़ते हैं । इन परिवर्तनों की साफ समझ शिक्षा-प्रक्रिया की महती आवश्यकता है क्योंकि यह प्रक्रिया इसी धरातल पर निष्पन्न होती है । प्रस्तुत रपट किशोरावस्था को समझने की एक क्रियात्मक अनुसंधान परियोजना के अंतर्गत आयोजित संवाद पर आधारित है जो प्रासंगिक सोच-विचार के लिए कुछ सूत्र छोड़ती है ।

विकास अध्ययन संस्थान जयपुर में 13 जनवरी, 97 को किशोर अवस्था की समझ बनाने के लिए एक बैठक का आयोजन किया गया । इस बैठक में जो लोग किशोर बालक बालिकाओं के साथ काम कर रहे हैं, उन्हें बुलाया गया तथा अनुभव आपस में बांटे जिससे उन अनुभवों के साथ एक समझ विकसित की जा सके । इस बैठक की शुरूआत में 'स्वास्थ्य शिक्षा द्वारा किशोरियों का सशक्तिकरण' -एक्शन रिसर्च प्रोजेक्ट में काम करते हुए जो समझ व प्रश्न उभरे थे, उन्हें रखते हुए चर्चा प्रारम्भ की गई ।

किशोर अवस्था को अधिकतर मुश्किल, समस्यामूलक, क्रिटिकल समय ('पीरियड़') की तरह परिभाषित किया जाता है, ये सभी शब्द किशोरावस्था के बारे में नकारात्मक भाव देते हैं । जबकि किशारोवस्था में बालिकाएं व बालक नये विचारों को अपने व्यक्तित्व में शामिल करने के लिए उत्सुक रहते हैं । नयी उमंग व कल्पनाएं इस उम्र में ऊर्जा प्रदान करती हैं । व्यक्तित्व को नये आयाम देने के लिए प्रयासरत रहते हैं । जरूरी है कि नकारात्मक भाव देने वाले शब्द किशोरावस्था के साथ क्यों व कैसे जुड़ गये हैं, इसको समझा जाये व किशोरावस्था की ताकतों व सकारात्मक पहलुओं को उजागर करने वाले शब्दों को इसके साथ जोड़ा जावे तथा उनका अधिक उपयोग किया जाये; जैसे - उर्जावान, बदलाव के लिए तत्पर इत्यादि।

किशोर बालिकाओं के साथ काम करते हुए यह बात स्पष्ट रूप से निकल कर आ रही है कि किशोरावस्था में प्रवेश करते ही बालिकाओं पर निगरानी ही नहीं रखी जाती बल्कि नाना प्रकार की रोक टोक व पाबन्दियां भी लगा दी जाती है, जैसे - स्कूल से हटा लेना, किसी अजनबी या लड़कों से बात न करने देना, घूमने फिरने न जाने देना इत्यादि; जिसका सीधा असर उसके जीवन पर पड़ता है।

इस उम्र की बालिकाओं के साथ काम करते हुये यह लगा कि प्रश्न यह नहीं है कि परिवारजन लड़की के बारे में चिन्तित नहीं हैं या सोचते नही हैं, बल्कि प्रश्न यह है कि वे किस दिशा की ओर चिन्तित है । परिवार जनों की उसके शरीर की सुरक्षा के प्रति चिन्ता तथा समाज में अन्य लोगों द्वारा दी जाने वाली टिप्पणियां आदि इस उम्र की बालिकाओं को अपने अन्दर होने वाले शारीरिक, मानसिक व भावात्मक बदलावों के प्रति असहज व संवेदनशील बना देते हैं। वर्तमान में जब अनेक सरकारी या गैर सरकारी संस्थानों ने किशोरियों के साथ काम करना प्रारम्भ किया तो उनके समक्ष चुनौती यह है कि कार्यक्रमों को इस प्रकार नियोजित किया जावे जिसमें किशोरावस्था की बालिकाएं व बालक अपने अन्दर हो रहे बदलावों को सहजता से स्वीकार कर सकें व उसके बारे में अपनी समझ बना सकें ।

समाज में महिला व पुरूषों के बीच असमानता व्याप्त है जो बहुत बार जन्म लेने के साथ ही या जन्म से पूर्व ही शुरू हो जाती है, बहुत कुछ असमानता के मूल्यों को बालिकायें अपने बचपन को जीते हुये ही आत्मसात कर लेती है ।

इन्हीं असमानताओं को किशोरावस्था की बालिकायें व बालक मानसिक रूप से सही ठहराते हुए या भाग्य मानते हुए स्वीकार कर लेते हैं । बाल्यपन की मनोवस्था माता पिता द्वारा संरक्षण से आच्छादित रहती है । किशोरावस्था में स्वतन्त्र व्यक्तित्व के निर्माण की शुरूआत हो जाती है व बालिकायें माता पिता से अलग अपने संबंध और पहचान बनाने के लिए प्रयासरत रहती है लेकिन बालिकाएं इस उम्र में माता पिता पर निर्भर रहती हैं । परिवार में उनके साथ हो रहे भेदभाव को खुलकर नहीं कह पाती व खुलकर कहने में उन्हें अधिकतर यह लगता है कि हम अपने परिवार (माता पिता) की बुराई कर रहे हैं, जिसके साथ उनकी पहचान भी गहराई, से जुड़ी हुई होती है । अत: इसके लिए यह सोचा जाना जरूरी है कि असमानता की बात को किशोरियों के साथ कैसे किया जाये जिससे उनकी संवेदनाएं आहत न हों तथा संतुलित व्यवहार को बनाये रखते हुए वे इस बारे में अपनी स्पष्ट समझ बना सकें व अपनी बात को

सक्षमता के साथ कह सकें।

शिक्षा के सार्वजनिकरण में छः से चौदह वर्ष की बालक व बालिकाएं आ जाती हैं । जबकि दस से चौदह वर्ष की आयु किशोरावस्था में प्रवेश की उम्र है । इस आयु में अपने शरीर के बारे में कुछ जानने व उसके साथ खुलेपन का संबंध स्थापित करने की महत्ती आवश्यकता है । शिक्षा में ऐसी विषयवस्तु तथा गतिविधियों को समाहित करने की आवश्यकता है जिससे बालक-बालिकाओं को अपने शरीर के बारे में जानकारियां भी मिलें तथा अपने शरीर के साथ खुला संबंध भी कायम हो सके ।

जयपुर में कच्ची बस्तियां ग्रामीण या पहाड़ी अंचल से न सिर्फ अलग हैं बल्कि विपरीत भी हैं । जैसे छोटे व कम स्थान पर मकानों का होना व अकेले बैठकर बातें करने का मौका न मिलना। जबकि लड़कियां इस मौके की तलाश में रहती हैं व इन्हें ऐसा मौका शौच जाने के समय व त्यौहारों आदि पर ही मिलता है । अध्ययन के दौरान यह पाया गया कि किशोरावस्था की लड़कियों के लिए माता पिता कुछ ऐसा काम ढूंढ़ते हैं कि वे घर बैठकर कर सकें या फिर ऐसा काम जिसमें वे स्वयं उनके साथ जावें । स्वतन्त्रता मिलने पर क्या करना चाहेंगी जैसा प्रश्न पूछने पर उत्तर मिला कि वे सहेलियों के साथ अकेले घूमने जाना चाहेंगी । व्यक्तिगत या निजी बातें लड़कियां पक्की तथा वफादार सहेलियों के साथ करती हैं । वही अच्छी मित्र मानी जाती हैं जो एक दूसरे की बातों को अपने तक ही सीमित रखें। यह प्रक्रिया अपने व्यक्तिगत व नये स्वतन्त्र संबंधों के निर्माण की प्रक्रिया भी है ।

इन प्रश्नों को रखते हुए यूनीसेफ से आयी गायत्री सिंह से अनुरोध किया कि कुमाऊं पहाड़ी क्षेत्र में जो अध्ययन किया था, उससे उभरे बिन्दु व समझ को सबके साथ बांटें। उन्होंने कुमाऊं क्षेत्र की भौगोलिक व सामाजिक व आर्थिक स्थिति को मद्देनजर रखते हुए किशोर बालक-बालिकाओं के बारे में अपने अध्ययन के कुछ मुख्य आयाम सबके सामने रखे ।

कुमाऊं की भौगोलिक स्थिति ऐसी है कि गांव से बाहर निकलते ही जंगल है तथा जलाने की लकड़ियां इकट्ठा करने का काम (जो वहां का मुख्य काम है) इस उम्र की लड़कियां करती हैं तथा जंगल की बनावट ऐसी है जिसमें पेड़-पौधे व पहाडियों की ओट में बैठकर बात करें तो उस बारे में किसी को पता नहीं लगता। ऐसा ही वहां की किशोर बालिकायें करती हैं । वो जंगल से लकड़ी लाने या अन्य किन्ही ऐसे कामों से जाती हैं और वहां पर जल्दी ही अपना काम पूरा करके आपस में अपने बारे में चर्चा करती हैं। वहां पर वे बिल्कुल निश्चिन्त होकर बैठ जाती हैं जहां उन्हें कोई नहीं देखता ।

कुमाऊं क्षेत्र की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है । वहां पुरूष वर्ग केवल खेतों में हल चलाने का काम करता है या गांजा निकालता है। सरकारी नौकरियों का अभाव है। युवा वर्ग के लिए भी रोजगार के अवसर कम है, पुरूष वर्ग फौज (गौरखा रेजिमेन्ट) में नौकरी करते हैं । फौजी घर पर एक या दो वर्ष बाद ही आते हैं, ऐसे में घर व बाहर के सभी कामों को किशोरावस्था की लड़कियां सीखती व करती हैं । किशोरावस्था में लड़कियां शौक व रूचि से नया कार्य सीखती हैं। इस दौरान उन्हें घर से बाहर जाने का भी अवसर मिलता है तथा वे अपनी उपादेयता सीधे तौर पर देख पाती हैं, इस पूरी प्रक्रिया में वे अच्छा अनुभव करती हैं । डा. गायत्री सिंह ने यह भी बताया कि पहाड़ी क्षेत्र में (हल को छोड़कर) लगभग सारा काम महिलायें ही करती हैं । वहां उन्हें इन सब कामों में पुरुषों की मदद नहीं मिलती । लेकिन सामाजिक रूप से पुरुष को ही पैसा कमाने वाला तथा घर चलाने वाला माना जाता है । किशोरावस्था में सीखे गये सभी काम भी लड़की की आत्मछवि नहीं बदल पाते । उनका कार्यक्षेत्र बढ़ जाता है लेकिन अधिकार क्षेत्र नहीं बढ़ता ।

यह अध्ययन इस ओर इंगित करता है कि महिलाओं एवं किशोरियों में निर्णय लेने की क्षमता व अधिकारों के बारे में जानकारी व उन्हें इस्तेमाल करने से सामाजिक व्यवस्था में स्थान बनाना संभव होगा । इसी के साथ उनकी आत्म छवि में भी कुछ बदलाव संभव हो सकेगा । उन्हें केवल काम सिखाकर यह सब हासिल नहीं किया जा सकता । किशोर बालिकाओं के साथ महिलाओं की स्थिति में भी बदलाव की आवश्यकता है ।

उन्होंने यह भी बताया कि जलवायु में अन्तर होने के कारण वहां पर महावारी पन्द्रह वर्ष की आयु में या उसके बाद ही शुरू होती है तथा उनके अध्ययन से यह स्पष्ट हो रहा था कि इसी आयु तक आते आते लड़कियां स्कूल छोड़ देती हैं ।

इस उम्र तक लड़कियां प्राथमिक या मिडिल कक्षा पास कर लेती हैं । लड़कियों को प्राथमिक शिक्षा दिलाने का एक और कारण है, लड़कों द्वारा शादी के लिए पढ़ी लिखी लड़की की चाहना । वहां के बहुत से लड़कों का फौज में भर्ती हो जाना तथा फौज से उन्हें कम और बहुत दिनों के बाद छुट्टी मिलना । लड़के यह सोचते हैं कि उसकी शादी एक पढ़ी लिखी लड़की से हो जो उसे पत्र लिख सके तथा उन्हें मनीआर्डर भेजने पर वे उसे प्राप्त कर सकें । उसके पीछे से घर का काम सुचारू रूप से चला सके ।

सामाजिक रूप से वहां की किशोरियों को देखें तो समाज में जो लड़की पढ़ लेती हैं उनकी समाज में विशेष प्रतिष्ठा बन जाती है । वहां पर लड़कियों की शादी के लिए लड़का ढूंढ़ने में परेशानी नहीं आती । अपवाद स्वरूप ही कोई लड़की वाला लड़का ढूंढ़ने

जाता है । अत: शादी को लेकर बोझ जैसा आभास माता पिता को नहीं होता ।

महावारी आने के साथ लड़कियों पर बहुत-सी बंदिशें लगा दी जाती हैं जैसे घर से न निकलने देना, देर तक बाहर न रहना, खेलने न देना, आदि । कुमाऊं क्षेत्र में रिवाज के अनुसार महावारी आने के बारे में ऐसा कहा जाता है कि फूल खिल गया व अब शादी की जा सकती है । किशोरियां अपनी शारीरिक जानकारी व समस्या का समाधान नहीं ढूंढ़ पाती । किसी समझदार महिला की मदद ले लेती हैं, बशर्ते वह काफी नजदीकी हो या उनसे खुला व्यवहार रखती हो। ऐसी स्थिति में अधिकतर लड़कियां अलगाव महसूस करने लगती हैं । महावारी के साथ असुरक्षा का भी आभास होने लगता है ।

जयपुर की बोध शिक्षण संस्था में कार्यरत बोध शाला की शिक्षिका कुमद जो कि प्रारंभ से बालिकाओं की शिक्षा से जुड़ी हैं, उन्होंने बताया कि किशोरावस्था में आने के साथ बालिकाओं की रुचि व आदतों में बदलाव नजर आने लगा । शारीरिक रूप से तो परिवर्तन दिख रहे थे, साथ ही वैचारिक दृष्टि में भी बदलाव आ रहे थे। कामकाजी होना व विवाह के बारे में विचार विमर्श इनके परिवार में इनके संबंध में मुख्य था व उसका काफी प्रभाव भी इनकी बातचीत में दिखता था। इनके साथ वे घर के कार्य (जैसे साज-सज्जा, सिलाई, कढ़ाई, बुनाई) में अधिक रुचि लेने लगी थीं । पढ़ने लिखने में रुचि कम होने लगी थी ।

किशोर बालिकाओं के स्वास्थ्य संबंधी शारीरिक बदलाव व समस्याओं पर विकास अध्ययन संस्थान के सहयोग से स्थानीय कच्ची बस्तियों में कार्य प्रारंभ किया गया। कार्य करने से पहले यह डर था कि इन विषयों का परिवार व शाला पर नकारात्मक प्रभाव हो सकता है । जिस प्रकार विकास अध्ययन संस्था द्वारा इस विषय पर पहल की गई, उसके परिणाम अच्छे रहे। जो लड़कियां पूर्व में शाला नहीं आई थीं वे भी किशोरी समूह में जुड़ीं । वे भी इस विषय पर जानने को उत्सुक थीं ।

इस विषय के साथ बस्तियों में किशोरी समूह बनाये गये । उनमें सबसे अधिक पहल उन लड़कियों ने ली जो पूर्व में प्राथमिक शिक्षा के संदर्भ में बोध शालाओं में आती थीं व बड़ी होने के कारण उन्होंने स्कूल आना बन्द कर दिया था । स्वास्थ्य व शरीर संबंधी गतिविधियों के दौरान इन समूहों में कुछ नई लड़कियां जुड़ीं। जो लड़कियां नई आयीं थीं उन्होंने ग्रुप से जुड़ने, प्रश्न पूछने, चर्चा करने आदि में समय लगाया, क्योंकि पूर्व में जुड़ी बालिकायें शिक्षक से परिचित थी, पढ़ना लिखना जानती थीं व अधिक सक्षमता से अपनी बात कह पाती थी व कार्य की प्रतिक्रियाओं को जल्दी ही समझने लगी थी ।

बोधशाला द्वारा बचपन में इन बालिकाओं को सीखने तथा पढ़ने लिखने के साथ साथ बहुत सी गतिविधियों में जुड़ने का जो मौका मिला उसका प्रभाव इन बालिकाओं के व्यक्तित्व पर दिखाई देता है ।

शिक्षा के सार्वजनिकरण में छ: से चौदह वर्ष की बालक व बालिकाएं आ जाती हैं । जबकि दस से चौदह वर्ष की आयु किशोरावस्था में प्रवेश की उम्र है। इस आयु में अपने शरीर के बारे में कुछ जानने व उसके साथ खुलेपन का संबंध स्थापित करने की महत्ती आवश्यकता है। शिक्षा में ऐसी विषयवस्तु तथा गतिविधियों को समाहित करने की आवश्यकता है जिससे बालक–बालिकाओं को अपने शरीर के बारे में जानकारियां भी मिले तथा अपने शरीर के साथ खुला संबंध भी कायम हो सके ।

इससे यह भी समझ बनी की शारीरिक बदलाव व उससे जुड़े प्रश्नों के प्रति उत्सुकता सभी लड़कियों में थी व कुछ दिनों तक विकास अध्ययन संस्थान से किसी के न आने पर लड़कियां पूछने लगती थीं कि विकास अध्ययन संस्थान से दीदी कब आवेंगी। हमें उनसे कुछ पूछना है ।

लोक जुम्बिश में कार्यरत क्षेत्रीय परियोजना अधिकारी नागपाल ने बताया कि औपचारिक शिक्षा केन्द्रों पर व स्कूलों (सैकण्डरी व सीनियर सैकण्डरी) में जो बालिकाएं शिक्षा प्राप्त कर रही हैं उनके साथ कार्य करने का निर्णय लिया गया । किशोर बालिकाओं के साथ चर्चा, स्कूली वातावरण तथा शिक्षण में आई समस्याओं से बातचीत आरंभ की गई ।

परन्तु यह पाया गया कि औपचारिक शिक्षा के बावजूद उनमें झिझक खत्म नहीं हुई । वे विश्वास के साथ बात कहने में सक्षम महसूस नहीं कर पाती । ऐसी स्थिति को देखते हुए लड़कियों के साथ एक कार्यशाला का आयोजन किया गया । इस कार्यशाला में व्यायाम, खेल, नाटक आदि गतिविधियाँ की जिनमें लड़कियों ने उत्साह से भाग लिया । अपनी समस्यायें भी बताई । शाला से संबंधित दो समस्याएं मुख्य रूप से सामने निकलकर आईं :

1. लड़कियों के लिए स्कूल में शौचालय न होना ।
2. लड़कों द्वारा लड़कियों के साथ छेड़छाड़ करना ।

लड़कियों ने यह भी कहा कि जो आये दिन छेड़छाड़ होती है, उसके बारे में हम घर वालों को भी नहीं बता सकते क्योंकि उन्हें पता लगने पर वे हमारी पढ़ाई छुड़वा लेंगे । स्थिति को देखते हुए यह विचार सामने आया कि महिला अध्यापिका को वस्तुस्थिति समझकर सलाह देने का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए, जिनसे लड़कियां खुलकर अपनी बात कह सकें ।

जयपुर की कच्ची बस्तियों में प्रारंभ से ही शिक्षिकाओं को पूरे कार्यक्रम के साथ जोड़ा गया है । कार्य के दौरान महसूस हुआ कि खुद शिक्षिकाओं में भी शरीर के बारे में बातचीत करने को लेकर बहुत झिझक व शर्म है । किशोरियों के साथ काम करते हुए धीरे धीरे उनमें भी झिझक कम हुई है । वे पहले से अधिक खुलकर उनके साथ बातचीत कर पाती हैं ।

सुष्मिता बनर्जी पूर्व में महिला विकास कार्यक्रम व बोध शिक्षण समिति से जुड़ी रहीं हैं व वर्तमान में 'जन-संप्लव' की संपादक हैं तथा इस परियोजना की गतिविधि समूह की सदस्य हैं। उन्होंने कहा कि बच्चे व किशोर सभी वयस्क कि नकल करने का प्रयास करते हैं । बच्चे फेन्टेन्सी में वयस्कों के संसार को जीवित कर लेते हैं जबकि किशोर उन कल्पनाओं को जीकर या स्वयं करके देखने का प्रयास करते हैं । किशोर जल्दी से जल्दी वयस्कों की भूमिका लेना चाहते हैं व उसमें अपनी शिक्षा व अपनी प्रतिभा को स्थापित करने का मौका ढूंढ़ते हैं ।

समाज में मास मीडिया जैसे दूरदर्शन जो छवियां (रोल मॉडल) प्रस्तुत करता है उनके प्रति किशोरों का आकर्षण बनता है। वे किस प्रकार की भूमिका में ज्यादा लोकप्रिय हो सकते हैं । उन रोल मॉडलों जैसा पहनने व बनने की इच्छा रहती है (ज्यादातर लड़कियों से पूछने पर कि वे किसके जैसी बनना चाहती हैं ?) वे हीरोइन का नाम लेकर कहती हैं, जैसे माधुरी दीक्षित, श्री देवी । दूसरी ओर लड़कियों को घर से बाहर निकलने के लिए मौके ही नहीं हैं । बालिकाओं की यौनिक पवित्रता व परिवार की इज्जत परिवारजनों की मुख्य चिन्तायें होती हैं । किशोरियों के लिए इस प्रकार की दिनचर्या नियत की गई है जिसमें किशोरियां परिवारजनों की नजर में रहें । इससे किशोरियों में मानसिक दुविधा पैदा हो जाती है ।

ऐसी विरोधाभासी स्थिति में स्वतंत्र सोच व व्यक्तित्व के विकास की संभावना नहीं है तथा अपने शरीर व भावनाओं पर अपने खुद के नियंत्रण का स्थान नगण्य है ।

राजस्थान वॉलेन्टरी हैल्थ एसोसियेशन से आई सुनिता ने हायर सैकण्डरी स्कूलों की अध्यापिकाओं के साथ किशोरावस्था के संदर्भ में किये गये प्रशिक्षणों के बारें में अपने अनुभव बताये । उन्होंने बताया कि अध्यापिकाओं ने स्वयं माना कि शरीर व शरीर के बदलाव से जुड़ी हुई किसी भी प्रकार की बातचीत स्कूल में नहीं होती । जो एक अध्याय कक्षा आठ में दिया गया है वह भी उन्हें स्वयं पढ़ लेने को कह दिया जाता है । तीन दिन के प्रशिक्षण के अन्त में अधिकतर अध्यापिकाओं ने माना कि पहले उन्हें अपने में बदलाव लाना होगा क्योंकि हम सभी अभी तक इस विषय पर चर्चा करने को बुरा मानते हैं व शर्म की बात समझते हैं ।

सुनीता की बात को आगे बढ़ाते हुए 'संधान' से आये पीयूशनाथ जोशी ने अपनी बात कही कि शिक्षक प्रशिक्षणों में भी इस विषय को स्थान नहीं मिला है । इस चर्चा से हमने इस आवश्यकता को महसूस किया है कि इस विषय को अध्यापक किस प्रकार अपनी विषयवस्तु से जोड़े व उसके लिए प्रशिक्षण में क्या क्या गतिविधियां हों इस पर भी चर्चा हो। इन भावी योजनाओं के लिए एक दिन की बैठक और रखी जाये तो इसे हम अपने कार्यक्रम से जोड़ पायेंगे ।

इन सभी चर्चाओं के साथ तेजी से हो रहे शारीरिक विकास का किस प्रकार किशोर जीवन पर प्रभाव पड़ता है उन बिन्दुओं पर चर्चा की गई, - जैसे :

- शरीर के प्रत्येक अंगों के आकार में वृद्धि होने के कारण एक न्यूरो मोटर कॉर्डिनेशन पुन: स्थापित होता है जैसे चाल में अन्तर होना, चीजों का हाथ से छूट जाना आदि । इस बात पर संभागियों ने अपनी किशोरावस्था को याद करते हुए कहा कि ऐसा तो हमारे साथ भी हुआ था और इस पर हमें डांट भी पड़ती थी ।

- तेजी से बदलावों के कारण शरीर में पोषक तत्वों की आवश्यकता बढ़ जाती है व सही पोषण न मिलने पर हाथ पैरों में दर्द, जल्दी थकान आ जाना या बीमार पड जाना जैसा होता रहता है ।

- इस बारे में माता-पिता व शिक्षकों की जानकारी को बढ़ाने की आवश्यकता है जिससे वे शारीरिक बदलावों तथा उसके साथ जुड़ी अन्य प्रक्रियाओं को समझ सकें ।

अन्त में, सभी ने पूरे दिन की चर्चा को सराहा व यह अपेक्षा भी दर्शाई की किस प्रकार की गतिविधियां प्रशिक्षण में जोड़ी जावें जिससे कि किशोरावस्था के प्रशिक्षण के बारे में समझ बना सकें व विभिन्न संस्थायें आवश्यकतानुसार सहयोग दे सकें। ◆